आसोज शुक्ल ४, शनिवार, दिनांक - २१-०९-१९६३
गाथा-५०८-५०९, ज्ञानसमुच्चयसार- ३५९-४२७,
श्रावकाचार-३०२, ३०५, ३१४ प्रवचन-६

यह उपदेशशुद्धसार, तारणस्वामी रचित। उसमें उपदेश शुद्ध कैसा होना चाहिए मुख्यरूप से यह बात चलती है। एक ५०८ गाथा। ५०७ कल आ गयी।

पोषंतु न्यान विन्यानं, पोषंति विन्यान कम्म षिपनं च।
सिद्धंतु कम्म षिपनं, सिद्धंति कम्म तिविहि मुक्कं च॥५०८॥

शुद्ध सर्वज्ञ वीतराग का उपदेश कैसा होना चाहिए? कि **'पोषंतु न्यान विन्यानं,'** भेदविज्ञान का पोषण करना चाहिए। पोषण अर्थात् पालना। भेदज्ञान में दो चीज़ें आयी। रागादि है, विकल्प है, कर्म है, निमित्त है और अपने शुद्ध स्वभाव से भिन्न है। ऐसा भेदविज्ञान का पालन करना चाहिए। राग आता है, मुनि को भी राग आता है। समझ में आया? छठवें गुणस्थान में सन्त, मुनि भावलिंगी परमेश्वरपद में आये, उन्हें भी व्यवहार का विकल्प पंच महाव्रत का, अट्ठाईस मूलगुण का, भगवान की भक्ति का, स्मरण का विकल्प अर्थात् राग उन्हें भी आता है। परन्तु वह आता है, उसका बराबर ज्ञान करना और उसका भेदज्ञान करके अन्तर में लीन होना। समझ में आया?

'पोषंतु न्यान विन्यानं,' भेदविज्ञान का पोषण करना। तो भेद में दो चीज़ आ गयी। एक में भेद नहीं होता। समझ में आया? दो चीज़ हो तो भेदज्ञान होता है। तो सम्यग्दृष्टि को भी चौथे गुणस्थान में भक्ति, देव-गुरु-शास्त्र का प्रेम, ऐसा शुभराग आता है। पंचम गुणस्थान में भी बारह व्रत का, अव्रत त्याग का उसे शुभविकल्प होता है। मुनि को भी, भावलिंगी सन्त को भी अट्ठाईस मूलगुण, गुरुवन्दन, शास्त्रश्रवण, मनन आता है। अभी आयेगा श्रवण में। तो वह सब विकल्प है। विकल्प आता है, परन्तु अन्तर में स्वभाव-सन्मुख राग से भिन्न होकर जितना अन्दर एकाकार हुआ, वही एक मोक्ष का मार्ग है। समझ में आया?

तो कहते हैं कि भेदविज्ञान का पोषण। पोषण का अर्थ पालन अर्थात् पोषण करना, पोषना। पोषण समझे या नहीं? भूख लगे तो आहार का पेट में पोषण होता है या

नहीं ? इसी प्रकार भगवान आत्मा एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में पुण्य-पाप के विकल्प उठने पर भी स्वभाव उससे भिन्न है, ऐसा अन्तर में ज्ञान-आनन्द का पोषण अर्थात् पालन करना। समझ में आया ? और **'पोषंति विन्यान कम्म षिपनं च' भेदविज्ञान सेवन से... 'कम्म षिपनं'** नाश पाते हैं। बीच में राग आता अवश्य है। समझ में आया ? मुनि को भी आता है। तीर्थंकर हो जब तक छद्मस्थ मुनिपद में हों, जब छठवें-सातवें (गुणस्थान) में विराजमान हों तो उनको भी छठवें गुणस्थान में राग आता है। शुभराग। परन्तु कहते हैं कि उस राग का ज्ञान करना। है, इतना ज्ञान करना, परन्तु पोषण तो राग से भिन्न अपने शुद्ध स्वभाव सन्मुख का पोषण करना। समझ में आया ? राग नहीं आता, ऐसा माने तो एकान्त मिथ्यादृष्टि हो जाता है और राग से अपने धर्म की अन्तर में पुष्टि होती है, ऐसा माने तो भी दृष्टि मिथ्या हो जाती है। समझ में आया ?

तो कहते हैं कि **'पोषंति विन्यान कम्म षिपनं च। सिद्धंतु कम्म षिपनं,'** क्या कहते हैं ? कर्म का क्षय हो, ऐसा साधन करो। साधन। वह अन्तर स्वरूप स्वभाव शुद्ध, उसमें एक करण नाम का गुण पड़ा है आत्मा में, करण। जैसे कर्ता, कर्म, करण आदि षट्कारक की शक्ति पड़ी है आत्मा में शुद्ध त्रिकाल, तो उसके करण नाम के गुण द्वारा साधन करना। स्वभाव का साधन करना। राग आता है, उसका साधन दृष्टि में से छोड़ देना। है, इतना ज्ञान करना, परन्तु स्वभाव के अन्तर्मुख होकर अपने शुद्ध स्वरूप का कर्ता, कार्य, करण, सम्प्रदान, अपादान, अधिकरण—ऐसे षट्कारक का शुद्ध स्वभाव पड़ा है तो द्रव्य के ऊपर लक्ष्य करके उसके स्वभाव का साधन करना। **इससे तीनों ही प्रकार कर्म छूट जाते हैं।** तीनों प्रकार के कौन से ? जड़ के कारण से जड़ कर्म छूट जाते हैं। शरीर छूट जाता है शरीर के कारण से और राग छूट जाता है, उस काल के कारण से। वह काल राग छूटने का था। स्वभाव-सन्मुख होता है, तब राग छूट जाता है, यह भावकर्म नाश हुआ, जड़ कर्म छूटता है, इसका नाम द्रव्यकर्म का नाश हुआ, शरीर छूटता है, इसका नाम नोकर्म नाश हुए।

मुमुक्षु : नोकर्म।

पूज्य गुरुदेवश्री : नोकर्म—यह शरीर नोकर्म वाणी आदि। जरा सूक्ष्म बात है

अन्दर समझने में। समझ में आया? देखो, यहाँ लिखा है। इसमें है, देखो भाई! गाथा २९९। इसमें २९९ गाथा। इसमें है। उसमें दो प्रकार का चारित्र है, देखो। २९९? २९८ पृष्ठ? २९९ गाथा है। १९३ पृष्ठ। देखो, २९९।

चिदानंद संदिट्ठं, दंसन दंसेइ न्यान सहकारं।
चरनं दुविहि संजोयं, न्यान सहावेन कम्म संषिपनं॥२९९॥

यह बात दूसरी है, हों! यह बात पहले अपने चली थी कि चरण दो प्रकार के—सम्यक् चरण और चारित्र चरण। यह दो प्रकार अलग, ये दो प्रकार अलग।

मुमुक्षु : वह .... चारित्र, यह तो अकेला चारित्र।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, यहाँ तो अकेले चारित्र के दो प्रकार हैं। पहले अपने चला था श्रावकाचार में से। पहले आ गया सम्यक् चरणं, चारित्र चरणं। वह भी दो प्रकार के हैं। यह दो प्रकार के हैं, उसमें भी दो प्रकार हैं, ऐसा मैं कहता हूँ। क्या कहते हैं? सम्यक्चरणं और चारित्रचरणं यह दो प्रकार हुए। तो समकित का चरण शुद्ध चैतन्यमूर्ति अन्तर, उसकी निर्विकल्प प्रतीति करके निःशंक आदि आठ गुण के... २९९ गाथा है न! गाथा २९९, पृष्ठ १९३। समझ में आया? गजब बात! उपदेशसार। उपदेशसार की २९९ है।

क्या कहते हैं? कि चरण दो प्रकार के—एक सम्यग्दर्शन चरण, एक चारित्र चरण। उसकी यहाँ बात नहीं, उसकी बात नहीं। यह बात श्रावकाचार में गयी। और यह बात अपने अष्टपाहुड़ में चलती है। कुन्दकुन्दाचार्य में। उसका सब अनुकरण करके लिया है। अष्टपाहुड़ में दो प्रकार के चरण शीलपाहुड़ में आये हैं। शीलपाहुड़ है, उसमें दो प्रकार के चरण लिये हैं। एक सम्यक् चरण। शुद्ध चिदानन्द आत्मा अनन्तगुण के पिण्डरूप एकरस, उसकी अन्तर दृष्टि करके निःशंक आदि का पालन। निश्चय से निःशंक आदि का पालन होना, वह सम्यक् चरण, निश्चय आचरण है और साथ में निःशंक आदि आठ प्रकार के विकल्प उठते हैं, वह व्यवहार समकित चरण चारित्र है। समझ में आया?

निःशंक आदि के आठ बोल हैं, वे दो प्रकार के हैं समकित चरण में भी। एक

अपने शुद्ध स्वरूप में अन्तर निर्विकल्प नि:शंक, नि:कांक्षित, निर्विचिकित्सा,... आठ। यह निश्चय में स्वरूप सन्मुख की अरागी परिणति की... वह भी गुण नहीं। नि:शंक आदि आठ आचार, वह गुण नहीं, वह है तो पर्याय। सम्यग्दर्शन भी पर्याय और आठ गुण भी उसकी पर्याय आचरण में है। यह निश्चय आचरण। और उस समय सच्चे देव-गुरु-शास्त्र की श्रद्धा। समझ में आया? ऐसे नौ तत्त्व की भेदवाली, विकल्पवाली श्रद्धा, ऐसा जो विकल्प—राग उठता है, वह समकित का व्यवहार आचरण है। वह व्यवहार आचरण है। वह व्यवहार आचरण बन्ध का कारण है। निश्चय आचरण मुक्ति का कारण है। दोनों आये बिना नहीं रहते। आहाहा! क्षायिक समकित हो भगवान... श्रेणिक राजा क्षायिक समकिती हुए तो उसमें नि:शंक आदि की निर्मल पर्याय, वह तो निर्विकल्प निर्जरा का कारण है। और साथ में सच्चे देव-गुरु-शास्त्र की पहिचान करके जो श्रद्धा होती है, भक्ति होती है, गुणस्मरण होता है, वस्तु स्तवन का विकल्प उठता है, वस्तु स्तवन—अपनी वस्तु कैसी है, उसका स्तवन गुणग्राम का विकल्प उठता है, वह व्यवहार सम्यग्दर्शन का आचरण कहा जाता है। तो सम्यग्दर्शन के आचरण दो प्रकार के हैं। आहाहा! समझ में आया? एक आचरण बन्ध का कारण है। आये बिना रहता नहीं। पूर्ण वीतराग न हो, तब तक आये बिना रहता नहीं। एक आचरण मुक्ति संवर-निर्जरा का कारण है।

इस प्रकार चरणचारित्र के दो प्रकार हैं। वे यहाँ कहे। देखो, वहाँ चरण आचरण कहा था। यहाँ कहते हैं, देखो! कि **चिदानन्द स्वभाव को भले प्रकार देखना चाहिए। 'चिदानंद संदिट्ठं'** और **'दंसेइ न्यान सहकारं' चिदानन्द ज्ञान की सहायता से सम्यग्दर्शन प्रगट होता है।** अन्तर सम्यग्ज्ञान द्वारा अन्तर निर्मल सम्यग्दर्शन होता है। क्योंकि सम्यग्दर्शन तो निर्विकल्प पर्याय है और ज्ञान सविकल्प पर्याय है। तो ज्ञान से अन्तर में जानकर अन्तर में प्रतीति होती है। सविकल्प का अर्थ राग नहीं। सविकल्प ज्ञान का अर्थ राग नहीं। वह ज्ञान का स्वभाव ही सविकल्प है। केवलज्ञान भी सविकल्प है। सविकल्प का अर्थ स्वपरप्रकाशक पर्याय को सविकल्प कहते हैं। और दूसरी अनन्तगुण की निर्विकल्प पर्याय को निर्विकल्प अर्थात् सत्ता रखनेवाली दशा कहते हैं। वह गुण अपने को नहीं जानते और वह गुण दूसरे दर्शन आदि ज्ञान को नहीं जानते। इस अपेक्षा से उसे

निर्विकल्प कहा जाता है। और ज्ञान अपने को जानता है, ज्ञान आनन्द को जानता है, ज्ञान चारित्र को जानता है, ज्ञान द्रव्य-पर्याय सर्व को जानता है, इस अपेक्षा से ज्ञान की पर्याय को राग बिना सविकल्प पर्याय का स्वभाव कहा गया है। गजब बात, भाई! समझ में आया?

तो यहाँ कहते हैं कि **ज्ञान की सहायता से...** शब्द पड़ा है न यह **'न्यान सहकारं'** है न? **सम्यक् प्रगट होता है। तब सम्यक् भाव ऐसा ही श्रद्धान करना। तब ज्ञान भी सम्यग्ज्ञान हो जाता है, सम्यग्दर्शन सम्यग्ज्ञान की प्रगटता पर...** अब सम्यग्दर्शन और सम्यग्ज्ञान होने के पश्चात् चरण प्रगट होता है। देरियाजी! सम्यग्दर्शन-सम्यग्ज्ञान बिना चारित्र-फारित्र होता नहीं। रात्रि भोजन का त्याग और यह सामायिक और फामायिक सब मिथ्या। समझ में आया? देखो, यह लिया न पहले? **'चिदानंद संदिट्ठं, दंसन दंसेइ न्यान सहकारं।'** दो बोल पहले सिद्ध किये।

अब तीसरा बोल सिद्ध करते हैं। है तो दोनों पर्याय। अब तीसरी यह चारित्र पर्याय के दो प्रकार। **'चरनं दुविहि संजोयं'** देखो, भाषा। चारित्र के दो प्रकार का संयोग होना, ऐसा लिखा है। अथवा होता है, उसे संयोग कहते हैं। चारित्र के दो प्रकार कौनसे? यहाँ व्यवहार और निश्चय चारित्र। निश्चय चारित्र उसे कहते हैं कि पहले कहा दर्शन और ज्ञान अनुभव सम्यक् प्रतीति अनुभव हुआ। सम्यक् आत्मा का ज्ञान हुआ, हों! पश्चात् स्वरूप में रमणता करना। निर्विकल्प रमणता, चारित्र रमणता। चरना, जमना, लीन होना। स्वरूप में जमना। अतीन्द्रिय आनन्द का अनुभव करना, उसका नाम निश्चय चारित्र कहा गया है। सेठी! और साथ में व्यवहारचारित्र होता है। आहाहा!

मुमुक्षु : तब बाह्य चारित्र काम का है।

पूज्य गुरुदेवश्री : बाह्य चारित्र जाननेयोग्य काम का है इतना। निमित्त पड़ता है। जाना हुआ प्रयोजनवान। उसमें इतनी स्पष्टता नहीं। यह समयसार में स्पष्ट है। १२वीं गाथा में कि निश्चय अपने स्वरूप का भान हुआ, पश्चात् राग हुआ, वह जाना हुआ प्रयोजनवान है। जाना हुआ प्रयोजवान है। आदरणीय नहीं, निषेध नहीं कि है ही नहीं, ऐसा नहीं। यह तो १२वीं गाथा में आया, ऐसा यहाँ नहीं है। यहाँ तो साधारण बात... साधारण बात की है। समझ में आया?

यहाँ कहते हैं कि '**चरनं दुविहि संजोयं**' यह अधिकार समझ में आया ? किसका चलता है ? यह उपदेश है न ? यह फिर आगे उसमें आयेगा। चिदानन्दस्वभाव चलता है। चिदानन्दस्वभाव चलता है। तो उस चिदानन्दस्वभाव में चारित्र के दो प्रकार आते हैं। समझ में आया ? एक व्यवहार और निश्चय। संयोग शब्द पड़ा है। दोनों साथ रहते हैं। भाई ! बात तो ऐसी है। संयोग का अर्थ मिलाना, वह तो ठीक, यह तो जरा अर्थ किया है इसमें। परन्तु वास्तव में निश्चय और व्यवहार संयोग अर्थात् साथ रहते हैं। व्यवहार केवली को नहीं होता, व्यवहार मिथ्यादृष्टि को नहीं होता। साधक को होता है। अन्तर सम्यग्दर्शन-ज्ञान अनुभव हुआ, उसे निश्चय और व्यवहार दोनों होते हैं। भगवान सर्वज्ञ को अकेला निश्चय प्रमाणज्ञान हो गया, उन्हें व्यवहार-फ्यवहार है नहीं। उनको नहीं है। दूसरे मानते हैं। भगवान को जितनी अशुद्धता है, वह भी व्यवहारनय का विषय है। दूसरे श्रुतज्ञानी जानते हैं। उन्हें व्यवहार-फ्यवहार है नहीं। और नीचे जब तक मिथ्यादृष्टि है, आत्मा निर्विकल्प क्या चीज़ है सर्वज्ञ ने कही, ऐसा दृष्टि में आया नहीं, अनुभव में आया नहीं तो उसे जितने दया, दान, व्रत, तप, भक्ति, यह रात्रिभोजन का त्याग सब मिथ्या... मिथ्या... मिथ्या है। समझ में आया ? यह कोई व्यवहार-फ्यवहार है नहीं। व्यवहार कब आता है ? कि '**चिदानंद संदिट्ठं, दंसन दंसेइ न्यान सहकारं।**' अपने ज्ञानस्वभाव से अन्तर्मुख होकर अपने स्वरूप का अनुभव किया और साथ में प्रतीति हुई, तब उसे चारित्र होता है। यहाँ तक तो चौथे गुणस्थान की बात हुई। पहले पद में चौथे गुणस्थान की बात हुई।

अब पाँचवें और छठवें की बात चलती है। समझ में आया ? जब सम्यग्दर्शनपूर्वक पाँचवाँ गुणस्थान श्रावक को—सच्चे भावश्रावक को आता है तो उसका चरण दो प्रकार का हो जाता है। एक, जितने अंश में स्वरूप में लीनता हुई, शान्ति हुई, दूसरी कषाय (चौकड़ी) का नाश होकर स्थिरता हुई, वह निश्चय चारित्र पाँचवें गुणस्थान में। और जितने बारह व्रत, दूसरों को दुःख न दूँ, अहिंसा, सत्य, अचौर्य, ब्रह्मचर्य ऐसा विकल्प आता है, उसे व्यवहारचारित्र कहा जाता है। पाँचवें गुणस्थान में दो प्रकार के चारित्र। समझ में आया ? निश्चय और व्यवहार। संयोग शब्द पड़ा है, इसलिए हमारी दृष्टि में तो साथ में है, ऐसा अर्थ है। मिलाना-फिलाना ऐसा नहीं। क्योंकि राग मिला सकता है,

ऐसा है नहीं। कौन मिलावे? राग आता अवश्य है, परन्तु राग मैं मिलाता हूँ और राग मैं करता हूँ—ऐसा सम्यग्दृष्टि की दृष्टि में नहीं है। परन्तु राग आता अवश्य है। पाँचवें गुणस्थान में बारह व्रत का राग, शुभराग, विकल्प... समझ में आया? देव-गुरु-शास्त्र की भक्ति का विनय, गुरु को वन्दन, गुरु का स्मरण, देव को वन्दन, णमो अरिहंताणं ऐसा स्मरण, यह सब शुभराग है, यह सब विकल्प है। उसे व्यवहारचारित्र में गिनने में आया है। वह व्यवहारचारित्र पुण्यबन्ध का कारण है। आये बिना रहता नहीं। और जितनी स्वभाव सन्मुख एकाग्रता हुई है, वह निश्चय चारित्र संवर और निर्जरा है। ओहोहो! समझ में आया?

मुमुक्षु : इसमें कुछ झट समझ में आवे, ऐसा नहीं है।

पूज्य गुरुदेवश्री : झट दो और दो = चार जैसा समझ में आवे, ऐसा है। देरियाजी! अब देरियाजी तो यहाँ महीने से पड़े हैं। झट समझ में नहीं आता, ऐसा कहते हैं। ऐई! यह सेठिया बचाव करते हैं, यह बड़े सेठ बचाव करते हैं। परन्तु भाई! भगवान के समवसरण में बालक भी समझ जाता है, पशु भी समझ जाता है। पहले नहीं समझे हुए ही समझते हैं न! अनादि से समझे नहीं, उन्हें तो यहाँ समझाते हैं। तीर्थंकर स्वयं भी पहले नहीं समझे थे, तब वे भी निगोद में और चार गति में भटके थे, उनका आत्मा भी। आहाहा!

सयाजीराव का दृष्टान्त दिया था न, भाई! वह सयाजीराव नहीं? कैसे? भाई! मलावराव। मलावराव को गद्दी से सरकार ने उठा दिया। जरा ऐसा कोई लक्षण में अन्तर था। गद्दी से उठा दिया मलावराव को। तीन करोड़ की आमदनी। पहले तीन करोड़ की उपज, हों! २५, ५० वर्ष पहले। बड़ोदरा। पश्चात् रानी कहे, अपने पुत्र नहीं, क्या करना? फिर उसके कुटुम्ब के दो पुत्र थे। दो या तीन। वे सब बकरियाँ चराते थे। बकरा समझते हो? भेड़ चराते थे। भैंसा कहो। ढोर चराते थे, लो न। वहाँ सिपाही गये। रानी साथ में। मलावराव की रानी। मलावराव को तो सरकार पकड़कर ले गयी थी। रानी गयी। बुलाओ। जाओ अपने परिवारी हैं, उन्हें बुलाओ। वे तुरन्त आये कि रानीसाहेब बुलाती हैं। चलो। उसमें बड़े भाई को पूछा क्यों आये हो भाई? रानी ने पूछा। वह तो

महाबुद्धिवाली हो न ? वह भी परीक्षा तो करे या नहीं ? कि तुम्हारे सिपाही आये थे तो हमे लाये हैं। छोटे को पूछा, यह सयाजीराव बैठे थे गद्दी पर, उनसे पूछा, क्यों आये हो भाई ? राज लेने आया हूँ। ओहो ! रानी कहे, जाओ इसे चढ़ा दो। चढ़ा दो, राज का मालिक यह है। वह पुण्य था न पुण्य अन्दर में। वह अन्दर में से पुण्य बोलता था।

यहाँ पवित्रता होने की योग्यतावाला बोलता है कि मैं बराबर समझता हूँ। मैं केवलज्ञान का राज लेने आया हूँ। समझ में आया ? पश्चात् सयाजीराव को गद्दी पर बैठाया। अन्दर में से उसे जोर आया है। उसका पुण्य दिखता है। रानी है न, उसे दिमाग बहुत। क्यों आये हो भाई ? राज लेने आये हैं, क्यों आये क्या ? तुम्हारे लोग हमको बुलाने आये थे, क्या मुफ्त बुलाने आये थे ? शोभालालजी ! रानी ने हुकम किया कि जाओ इसे पढ़ाओ और राजगद्दी के मालिक यह है। तीन करोड़ की उपज का राजा यह है। जाओ।

इसी प्रकार यहाँ हमारे आत्मा में राज लेना है। केवलज्ञान लेना है। हम समझ सकते हैं। समझ नहीं सकते ? जाओ ढोर चराओ। देरियाजी ! बराबर हम केवलज्ञान लेने तैयार हैं। हमारा आत्मा ही केवलज्ञान से भरपूर है। आया न भाई, नहीं गुप्त ? है न कहीं ? ऐई ! गुप्त का कहाँ है ? यह देखो दो है न दो ? एक के बाद दो। ममलपाहुड़ तीसरा भाग।

....

..... है ? दूसरी गाथा। पहले नहीं दूसरी। **जब परमात्मा के...** देखो। २२९ पृष्ठ और दूसरी गाथा।

मुमुक्षु : गाथा २२७....

पूज्य गुरुदेवश्री : बस यह। क्या कहते हैं, देखो, कि **जब परमात्म स्वभाव से मेल किया जाता है।** देखो मिलान किया है कि मैं परमात्मा होने के योग्य हूँ। समझ में आया ? देखो ! मिलान-मिलान। मिलान हो गया, यह राज में मिलान हो गया। देरियाजी ! इसी प्रकार मैं आत्मा परमात्मस्वरूप हूँ। मेरा शुद्ध चिदानन्द अखण्ड आनन्द है। मैंने उसमें से प्रगट किया। देखो, क्या कहते हैं ? **मेल किया जाता है। तब अपना स्वभाव**

भीतर से खींचकर... देखो, ... अन्दर में से खींचकर पर्याय में आता है। समझ में आया? यह राजकुमार को बुलाया कि यहाँ आओ। खींचकर लाये। किसलिए आये हो? राज लेने आया हूँ। इसी प्रकार अपने आत्मा में एक सेकेण्ड के असंख्य भाग में सर्वज्ञपद पड़ा है अन्दर। वह सर्वज्ञस्वभाव कहीं है, भाई, हों! सर्वज्ञस्वभाव अपने पहले कहीं आ गया है।

मुमुक्षु : पहले बात हो गयी।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, पहले बात हुई। और उसमें भी कहीं दूसरी जगह आती है, सर्वज्ञ समान। यह ज्ञानसमुच्चयसार में है। यह बाद में निकालना। यहाँ क्या कहते हैं?

जिनेन्द्र का रूप खींचकर प्रगट होता जाता है। आहाहा! जैसा परमात्मा अपना स्वभाव है, ऐसी दृष्टि करके, खींचकर शक्ति में से पर्याय में परमात्मा का जन्म होता है। बाहर से परमात्मा आता है कहीं? कोई राग में से आता है? राग होता है। यह तो कहते हैं न! चारित्र दो प्रकार के होते हैं, राग होता है। भूमिका प्रमाण राग आये बिना रहता नहीं। परन्तु कहाँ से आता है परमात्मा? वह राग में से आता है? एक समय की पर्याय है, उसमें से आता है?

मुमुक्षु : त्रिकाल भण्डार भरा है।

पूज्य गुरुदेवश्री : भण्डार भरा है। समझ में आया?

.... **और होते ही जिनेन्द्ररूप हो जाता है।** प्रतीति तो ला, श्रद्धा तो ला कि अन्दर में आत्मा मैं ही परमात्मा हूँ। ऐई! अचलजी! यहाँ तो (ऐसा कहते हैं), हमको समझ में नहीं आता, हम पकड़ नहीं सकते। भिखारी हो? रंक हो? जाओ ढोर चराओ। यहाँ कहते हैं ... **मोक्ष जानेवाले सिद्ध भाव में रमण करना जिनेन्द्र की जय हो।** पहले है न। जय-जय। जय हो! जय हो! हमारा स्वभाव अन्दर में पड़ा है। मैं एकाकार दृष्टि करके, लीनता करके शक्ति में से खींचकर लाना है। हमारा परमात्मा हमारे पास है, बाहर है नहीं।

मुमुक्षु : .... जागृत करते हैं।

पूज्य गुरुदेवश्री : जागृत करते हैं। रंक को ऐं...ऐं... ऐसा करे... यह दृष्टान्त नहीं

दिया था पहले ? पहले दृष्टान्त दिया था, भाई ! नहीं उस समय ? देरियाजी ! जहाज का। एक जहाज था। जहाज-जहाज। २०० जहाज थे। तो मुम्बई से चले थे। तो चलते-चलते कोई गाँव आ गया। कोई भावनगर या कोई ऐसा था। बहुत पहले की बात है। तो उसमें पानी का क्या कहलाता है ? तूफान हो गया तो १९८ जहाज डूब गये। वहाण समझते हो न ? जहाज। दो जहाज (बचे) । उस सेठ को खबर पड़ी। शोभालालजी को खबर पड़ी कि हमारा जहाज है। १९८ गये और दो रहे। जाओ हमारे जहाज हैं वे दो। कहे, हमारा जाता नहीं। हमारा पुण्य है, हमको खबर है। दूसरों के १९८ जहाज जाये, हमारा नहीं जायेगा। वहाँ गये तो उनके ही दो जहाज थे। सेठ ! वह कहे कि १९८ डूब गये। डूबे दूसरे के, हमारा नहीं डूबता। जाओ, देखो वहाँ। लोग गये तो उनके ही दो जहाज थे। समझ में आया ? अपने पुण्य का भरोसा था कि हमारा पुण्य अभी कम नहीं हुआ। हमारा पुण्य है। वह तो कुछ पवित्रता का, पुरुषार्थ का कुछ काम नहीं। वह कोई बाहर की चीज़ पुरुषार्थ से नहीं हुई। वह तो पूर्व का पुण्य पड़ा हो तो उसका भरोसा हो तो पुण्य के कारण से मिले, पुण्य न हो तो न मिले। उसमें आत्मा का पुरुषार्थ क्या काम करे ? कुछ काम नहीं करता। सेठी ! हमारे दोनों जहाज तिरते हैं।

इसी प्रकार सम्यग्ज्ञानी अपने स्वभाव... सब डूब गये... सब डूब गये। परन्तु सब डूब गये किन्तु हम तो तिरनेवाले हैं। दुनिया को डूबने दो। हम तो केवलज्ञान लेनेवाले हैं। सेठी ! देखो, क्या कहते हैं ? यह तो पहले से ही ऐसा कहते हैं कि हमको यह सम्यग्दर्शन महँगा पड़ता है, दुर्लभ लगता है, कठिन बात है। निश्चय-व्यवहार दो नय की कठिन बात है। दो नय कठिन नहीं। वह तुझे समझ में आये ऐसी है। यह आचार्य तुझे क्या समझाते हैं ? कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं कि हम किसे समझाते हैं ? जड़ को समझाते हैं ? चेतन को समझाते हैं। चैतन्य अन्दर पड़ा है। ज्ञानमूर्ति पूर्णानन्द अनन्त गुण का पिण्ड, उससे कहते हैं कि तू जागृत हो। अरे... ! हम नहीं। अरे कायर ! अभव्य कहते हैं कुन्दकुन्दाचार्य। यह अपने भी आ गया। उनका ही अनुकरण किया है तारणस्वामी ने। अभव्य अपने आ गया है। कहीं आया है न ? पहले आ गया। अभव्य हो ? कहीं आ गया। दूसरे में आया। अभव्य अर्थात् वह अभव्य नहीं, परन्तु हमारी बात तुझे सत्य कहते हैं। निश्चय-व्यवहार की बात समझता नहीं, जानता नहीं। क्या नालायक है ?

पहले आ गया अपने। आठ व्याख्यान में आ गया अभव्य। समझ में आया?

तो यहाँ कहते हैं कि जय जय... हम तो जिनेन्द्र परमात्मा की पर्याय पाने का पुरुषार्थ करते हैं। जय जय होगा। पश्चात् यह सर्वज्ञ है या नहीं? कहाँ? ज्ञानसमुच्चयसार। देखो, २३० पृष्ठ है। ज्ञानसमुच्चयसार। यह तो है तुम्हारे पास।

उवंकारं ह्रियंकारं, श्रियंकारं ति अर्थ ऊर्ध सुद्धं च।
पंचस्थान संजुत्तं, सम्मत्तं सुध समय सर्वन्यं॥४२७॥

ॐ तो भगवान की वाणी है। ॐ। जब सर्वज्ञ परमात्मा पूर्ण केवलज्ञान प्राप्त करते हैं न, तब उनकी वाणी ऐसी नहीं निकलती। अपने निकलती है, वह तो अभी राग है न, तो भेदवाली वाणी निकलती है। वीतराग जहाँ अन्तर सर्वज्ञ हुए (तो उनको) एकाक्षरी वाणी ॐ ध्वनि उठती है। समझ में आया? भगवान के मुख में से ॐ ध्वनि उठती है। एकाक्षरी। क्यों? कि वे अरागी हो गये। अकषाय स्वभाव हुआ तो भेद नहीं। वाणी भी निरक्षरी अभेद निकलती है। यहाँ राग है तो वाणी भेदवाली निकलती है। अनेक अक्षरवाली। समझ में आया? भगवान की वाणी यह पहले कहा, देखो, **'उवंकारं' ॐ ह्रीं श्रीं इन तीन पदों का ध्यान करते हुए...** भगवान के ॐ। ॐ के दो प्रकार हैं। वाणी एक ॐ है। ॐ.... विकल्प उठता है वह। और एक ॐ आत्मा के स्वभाव को भी ॐ कहा जाता है।

'ह्रियंकारं, श्रियंकारं' यह तीन मन्त्र की बात है। **'पंचस्थान संजुत्तं' पाँच परमेष्ठी का स्वरूप विचारते हुए...** देखो, **'सम्मत्तं सुध समय सर्वन्यं।' शुद्ध आत्मा को सर्वज्ञ समान ध्याना यही सम्यग्दर्शन का आचरण है।** है भाई? है इसमें? ४२७ नहीं आया? अन्तिम शब्द है, देखो, **'सुध समय सर्वन्यं।'** यह तो पाठ है न उसमें? शुद्ध समय अर्थात् आत्मा। शुद्ध समय अर्थात् आत्मा, शुद्ध समय अर्थात् आत्मा। शुद्ध आत्मा को **'सर्वन्यं सम्मत्तं'** सर्वज्ञ समान ध्यान करना चाहिए। मैं रागी हूँ, मैं शरीरी हूँ, मैं कर्मी हूँ, मैं अल्पज्ञानी हूँ, ऐसा नहीं। समझ में आया? है या नहीं भाई? वाँचे नहीं, विचार करे नहीं। पैसे में रहे और वाँचा नहीं अभी तक।

मुमुक्षु : वाँचे तो समझ में आता नहीं।

पूज्य गुरुदेवश्री : लो, समझ में नहीं आता। देरियाजी! वकालत की। बात तो ऐसी है।

क्या कहा ? ओहो ! देखो शब्द ! '**सम्मत्तं सुध समय सर्वन्यं।**' यह पंच परमेष्ठी का स्वरूप चिन्तन करते-करते अपना शुद्ध स्वरूप '**समय सर्वन्यं सम्मत्तं**' अपना आत्मा ही सर्वज्ञस्वरूप त्रिकाल स्थित है गर्भ में। सर्वज्ञ स्थित हैं तो पर्याय में सर्वज्ञ का गर्भ में जन्म होता है। समझ में आया ? यह गर्भ अवतरित हुआ, ऐसा आता है न भाई ! महेन्द्रभाई ! यह गर्भ अवतरित आता है। ममलपाहुड़ में आता है। सब गाथा याद नहीं। गर्भ अवतरित हुआ। था तो अवतार हुआ है। अपने आत्मा में... एक-एक आत्मा, हों ! ऐसे अनन्त आत्मा। अनन्त आत्मा, उससे अनन्तगुणे परमाणु, उससे तीन काल का समय अनन्त गुणा। ऐसा भगवान ने केवलज्ञान में देखा। समझ में आया ? ऐसे एक-एक आत्मा में सर्वज्ञ समान मैं हूँ, ऐसा ध्यान करना, ऐसी श्रद्धा अन्तर्मुख होकर करना और **ध्यान ही सम्यग्दर्शन का आचरण है।** देखो, समझ में आया ?

क्या कहते हैं यहाँ ? कौनसा अधिकार आया ? अब मुनि का दो प्रकार का चारित्र रह गया है। '**चरनं दुविहि संजोयं**' दो का संयोग होता है। जहाँ निश्चय होता है, वहाँ व्यवहार होता ही है। जहाँ व्यवहार हो, वहाँ निश्चय हो तो व्यवहार कहा जाता है। समझ में आया ? यह श्रीमद् में कहते हैं, 'नय निश्चय एकान्त से उसमें नहीं कहेल, एकांते व्यवहार नहिं दोनों साथ रहेल' दोनों साथ रहेल संयोग शब्द समझना। निश्चय है वहाँ व्यवहार है ही। केवली को तो व्यवहार-निश्चय कुछ नहीं, उन्हें तो प्रमाणज्ञान हो गया। मिथ्यादृष्टि को निश्चय है नहीं तो व्यवहार भी नहीं है। सम्यग्दृष्टि से चौथे, पाँचवें, छठवें तीन गुणस्थान में (व्यवहार होता है)। सातवें गुणस्थान में तो ध्यान में हैं, अप्रमत्तदशा में हैं। तो कहते हैं कि चरण दो प्रकार के। श्रावक को दो प्रकार के चरण। राग जो विकल्प उठता है, आता अवश्य है, उसे व्यवहार जानना और अन्तर स्वरूप में लीनता, उसे निश्चय जानना। यह श्रावक।

अब मुनि। मुनि को दो प्रकार का चारित्र है। एक निश्चय, एक व्यवहार। निश्चय स्वभाव की अनुभव दृष्टि सर्वज्ञ समान की हुई और पश्चात् प्रतीति में, लीनता में एकाकार हुआ, निर्विकल्प स्थिरता हुई, उतना निश्चयचारित्र। तीन कषाय का अभाव होकर स्वभाव में स्थिरता हुई, वह निश्चयचारित्र। और पंच महाव्रत, अट्ठाईस मूलगुण

के (विकल्प) उठते हैं, छह आवश्यक—सामायिक, चोविसंथो, वन्दन,.... मुनि को भी। व्यवहार आवश्यक, हों! विकल्प उठे वह। निश्चय आवश्यक स्वरूप में स्थिरता और व्यवहार आवश्यक छह क्रिया मुनि को सवेरे-शाम होती है। छठवें गुणस्थान में भावलिंगी जैनदर्शन के सच्चे साधु। छह आवश्यक का विकल्प उठता है, उसे व्यवहारचारित्र कहा जाता है। आहाहा! निश्चय माने और व्यवहार न माने, मूढ़ मिथ्यादृष्टि है। व्यवहार माने और निश्चय है नहीं तो मूढ़ मिथ्यादृष्टि है। समझ में आया?

'न्यान सहावेन कम्म संषिपनं' तथापि, ऐसा होने पर भी, व्यवहार आने पर भी, व्यवहार होने पर भी ज्ञानस्वभाव में जब एकता होगी, कर्म का विपाक, निर्जरा ... तो तब होगी। जितना वह राग है, उससे हटकर जितना स्वरूप में लीन (होता है)... खसीने, क्या कहते हैं? हटकर—खसकर जितनी स्वरूप में निर्विकल्प शान्ति प्रगट हुई, वह एक ही मोक्षमार्ग है। उससे कर्म खिरते हैं। पश्चात् व्यवहार आता है, उससे कर्म नहीं खिरते। आता अवश्य है, आये बिना रहता नहीं। भूमिका प्रमाण व्यवहार अवश्य आता है। तो उसका उस भूमिका प्रमाण व्यवहार कैसा है, उसका ज्ञान बराबर ज्ञानी करते हैं और स्वभाव का आश्रय लेकर उसमें जितनी लीनता हुई, उससे ज्ञान (पूर्णता को पाता है)। देखो अन्त में। दो बातें की—निश्चय और व्यवहार। परन्तु **'न्यान सहावेन कम्म संषिपनं'** परन्तु एक निश्चय स्वभाव से कर्म खिरते हैं। व्यवहार से कर्म खिरते नहीं। आहाहा! समझ में आया? दूसरा है, हो भाई कहीं। दो प्रकार के चारित्र नहीं? ज्ञानसमुच्चय यह क्या है? इस ज्ञानसमुच्चयसार में है। ३५९ गाथा, १९५ पृष्ठ। यह श्रावक का अधिकार चलता है, भाई! यह पाँचवें गुणस्थानवाले का अधिकार चलता है। ज्ञानसमुच्चयसार। वहाँ अणुव्रत का अधिकार चलता है। ३५९। ५९ कहते हैं न? ३, ५, ९। देखो पीछे। परिग्रह परिमाण व्रत। ये सब अणुव्रतधारी के पाँचवें गुणस्थान की व्याख्या। तो पाँचवें गुणस्थान में भी...

बभं चरन समत्थं दुविहिं चारित्त चरन मयमेयं।
अद सहाव सरुवं, बंभं चरन अनुव्वया हुंति॥३५९॥

अणुव्रती तब कहते हैं, **वही ब्रह्मचर्य के पालने को समर्थ है...** अपना ब्रह्म

अर्थात् आनन्द। ब्रह्म अर्थात् आनन्द में चरना, चरना, रमना, उसमें समर्थ है। **'मयमेयं दुविहिं चारित्त चरन' जो आनन्दपूर्वक निश्चय व्यवहार चारित्र को आचरण करता है...** क्या कहते हैं ? श्रावक पाँचवें गुणस्थान में अपने आत्मा का अतीन्द्रिय आनन्द भी हुआ है निश्चय और साथ में पाँच अणुव्रत और बारह व्रत के जो विकल्प उठते हैं, उसे व्यवहारचारित्र कहते हैं। अभी पाँचवें गुणस्थान की क्या दशा ? क्या व्यवहार ? क्या निश्चय ? इसकी खबर नहीं। हाँक रखे भगवान के नाम से। भगवान ऐसा कहते हैं और वीतराग ऐसा कहते हैं। भाव में बड़ा अन्तर है। जहाँ वस्तु की खबर नहीं। समझ में आया ?

कहते हैं **'दुविहिं चारित्त चरन मयमेयं'** चरणं—यह आचरण करते हैं। समझ में आया ? व्यवहार का आचरण करते हैं, यह व्यवहारनय से कहा है। निश्चय का आचरण वह निश्चयनय से कहा है। दो नय का आचरण है। आहाहा! **'अद सहाव सरुवं' आत्मा के स्वभाव में रमता है, वही ब्रह्मचर्य अणुव्रती होता है।** भले फिर आया कि पाँचवें गुणस्थान में सच्चे श्रावक को बारह व्रत आदि का विकल्प है, राग आता है, परन्तु **'बंभं चरन अनुव्वया हुंति'** वास्तव में तो भगवान ब्रह्मचर्य आत्मा आनन्द में लीन होता है तो उसके राग को व्यवहार अणुव्रत; स्थिरता हुई, वह निश्चय अणुव्रत है। समझ में आया ? देखो !

भावार्थः—ब्रह्मचर्य अणुव्रती व्यवहार में स्वस्त्री में सन्तोषपूर्वक वर्तता है। अन्य प्रकार कुशील के भावों से विरक्त रहता है। निश्चय से वह अपने आत्मा के स्वभाव का मनन करता है। दोनों बातें हैं या नहीं ? हो गये हैं वीतराग ? श्रावक है न ! अभी तो व्यापार-धन्धा करता है पाँचवें गुणस्थान में राजपाट में पड़ा हो। अशुभराग भी आता है और शुभ ऐसे बारह व्रत का विकल्प उठता है, वह शुभराग है। आचरण आता है, परन्तु वह पुण्यबन्ध का कारण है। उसे न माने तो एकान्त हो जाये और स्वभाव में एकाग्र हुए बिना व्यवहार माने तो भी मिथ्यादृष्टि हो जाता है। बहुत अटपटी बात है।

मुमुक्षु : है स्पष्ट।

पूज्य गुरुदेवश्री : है तो स्पष्ट परन्तु,.... समझ में आया ?

मुमुक्षु : समझना पड़ेगा।

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, समझना पड़ेगा। अभी तक ऐसी का ऐसी उल्टी गाड़ी चलायी है।

देखो, अब अपने यह चलता है। रात्रि का एक है न मिथ्या सामायिक का नहीं थोड़ा कुछ? श्रावकाचार गाथा ३१४ है। श्रावकाचार है? श्रावकाचार गाथा ३१४। यहाँ है भाई? श्रावकाचार नहीं होगा। देखो, उसमें कहते हैं। रात्रि ... त्याग किसे कहते हैं?

अनेक पाठ पठनंते, वंदना श्रुत भावना।
सुद्ध तत्त्वं न जानंते, सामायिक मिथ्या उच्चंते॥३१४॥

श्रावकाचार। '**अनेक पाठ पठनंते**' **अनेक पाठों का पढ़ना...** '**वंदना**' भगवान की करते हैं, गुरु की करते हैं। '**श्रुत**' शास्त्र की करते हैं, '**भावना**' करते हैं। '**सुद्ध तत्त्वं न जानंते**' समझ में आया? यह तो श्रावकाचार की बात है, हों! ३१४। अपना '**सुद्ध तत्त्वं न जानंते, सामायिक मिथ्या**' यह सामायिक मिथ्या है। सेठी! अपने तत्त्व की पहिचान बिना तेरी सामायिक आयी कहाँ से? समझ में आया? '**अनेक पाठ पठनंते**' वापस ऐसा लिया है। पाठ ऐसा लिया है। साधारण नहीं अनेक पाठ पढ़ने। शास्त्र की स्वाध्याय, बराबर शब्द रटे, शब्द में अन्तर न पड़े। अब शब्द में अन्तर न पड़े, उसमें क्या हुआ? भाव अन्दर में आत्मा निर्विकल्प चैतन्य कौन है, उसकी प्रतीति, उसका ज्ञान, व्यवहार क्या है, उसका तो भान नहीं। तो कहते हैं कि '**अनेक पाठ पठनंते, वंदना श्रुत भावना।**' शास्त्र की भावना करे। वाँच लो शास्त्र, भावना भाओ। शास्त्र ऐसा और शास्त्र ऐसा। वन्दन करो शास्त्र को।

'**सुद्ध तत्त्वं न जानंते,**' परन्तु शुद्ध आत्मिक तत्त्व का अन्तर सम्यग्ज्ञान है ही नहीं, वह तो राग से मानता है, निमित्त से मानता है, ऐसा मानता है और ऐसा मानता है। '**सामायिक मिथ्या उच्चंते**' उसकी सामायिक मिथ्या कहलाती है। वह रात्रि भोजन में है न एक जगह? गाथा ३०४। २९६। अक्षर में अन्तर पड़ गया है। है तो ३०२ परन्तु छप गया है ३०४। छपने में अन्तर है।

सुद्ध तत्त्वं न जानंते, न संमिक्तं सुद्ध भावना।
श्रावगं तत्र न उत्पादंते, अनस्तमितं न सुद्धये ॥३०२॥

जो कोई गृहस्थ शुद्ध आत्मिक तत्त्व को नहीं समझते हैं, न उनको सम्यग्दर्शन है, न शुद्ध आत्मिक तत्त्व की भावना है। वहाँ श्रावकपना उत्पन्न हो सकता नहीं। श्रावकपना है ही नहीं। '**अनस्तमितं न सुद्धये**' वह रात्रि आहार का त्याग, उसके आत्मा की शुद्धि के कारणभूत नहीं। रात्रि में नहीं खाऊँ, ऐसा राग मन्द हो इतना। उसमें आत्मा की शुद्धि नहीं है। समझ में आया?

जे नरा सुद्ध दिस्टी च, मिथ्या माया न दिस्टते।
देवं गुरं स्त्रुतं सुद्धं, संमत्तं अनस्तमितं व्रतं ॥३०३॥

जो मानव शुद्ध सम्यग्दृष्टि है, जिनमें मिथ्यात्व मायाचार नहीं दिखलाई पड़ता है, जो... 'सुद्धं देवं गुरं स्त्रुतं' शुद्ध वीतरागदेव, वीतरागी साधु, वीतराग विज्ञान शास्त्र को मानते हैं, उन्हीं का रात्रिभोजन त्याग व्रत सफल है। समझ में आया? कठिन बात है जगत को। अब हमारे यह करना या नहीं? अब करने की कहाँ बात है? देखो ३०५ में है। '**जीव रष्या षट् कायस्य**' श्रावक जीव की रक्षा। समकिती की बात है, हों! पहले सम्यग्दर्शन हुआ है, उसकी बात है। इसके बिना सब मिथ्या है। '**जीव रष्या षट् कायस्य**' यह व्यवहार की भाषा है। आत्मा कहीं छह (काय) जीव की रक्षा नहीं कर सकता। सम्यग्दृष्टि मानता नहीं कि हम छह (काय) जीव की रक्षा कर सकते हैं, परन्तु उसे (जीव) न मरे ऐसा भाव आया, उसे छह (काय) जीव की रक्षा का भाव आया, ऐसा कहा जाता है। क्या परद्रव्य की पर्याय आत्मा कर सकता है? यह अर्थ ही न समझे तो गड़बड़ करे श्रावकाचार में से।

'**जीव रष्या षट् कायस्य, संकये सुद्ध भावनं।**' देखो, **शुद्ध दृष्टि, श्रावक शुद्ध दृष्टि षट्काय के जीवों के रक्षा करना अपना कर्तव्य समझता है।** यह कर्तव्य-फर्तव्य की बात नहीं। वह तो ... जाये, ऐसा विकल्प आता है, इतनी बात है। शीतलप्रसाद ने ऐसा ऐसा अर्थ लिखा है। समझ में आया? भाई! यह तो ऐसी कसौटी है।

मुमुक्षु : .... परख हो जाती है।

पूज्य गुरुदेवश्री : बराबर परख हो जाती है। भगवान की वाणी में ऐसा आया नहीं कि तू परद्रव्य की पर्याय कर सकता है। ऐई! शोभालालजी! यह परद्रव्य की पर्याय उससे होती है। तू पर की रक्षा कर सकता है? पर को मार सकता है तीन काल, तीन लोक में? पर की मैं रक्षा कर सकता हूँ, ऐसा मानना वह मिथ्यादृष्टि है। पर की हिंसा कर सकता हूँ, मार सकता हूँ, यह दृष्टि मिथ्यात्व की है। पर को जिला सकता हूँ, मार सकता हूँ, सुखी-दु:खी कर सकता हूँ, ऐसी मान्यता मिथ्यादृष्टि मूढ़ की है, जैन की दृष्टि है नहीं। ऐई...! देरियाजी!

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : यह तो समझे तभी से सवेरा। उसमें क्या है? भूल हो गयी, हो गयी। लोगों को समझना पड़ेगा या नहीं?

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : हाँ, देखो।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : तो भाई! अभ्यास करना। दूसरा अभ्यास कैसे हो गया तुम्हारे पुत्र का? लड़का साथ में आया है। ... क्यों भाई क्या करते हो? उसकी सम्हाल करते हैं या नहीं? शोभालालजी! इसी प्रकार यहाँ अपनी पर्याय की सम्हाल करना, समझण करना। पर्याय अपनी प्रजा है। समझ में आया? वह प्रजा अपनी नहीं। पर्याय समझते हो? पर्याय कहो या प्रजा कहो, भगवान पिता है। आत्मा पिता है और पर्याय प्रजा है। है न, उसमें आया न? ममलपाहुड़ में आया है। बाप, चेला-चेली बहुत आया है। बेटा-बेटी यह सब अन्दर में घटित किया है। शास्त्र में घटित किया है। समझ में आया? प्रजा अपनी पर्याय निर्मल होती है, वह अपनी पर्याय है, प्रजा है। और विकार उत्पन्न होता है वह ... प्रजा है। स्वभाव पिता है, त्रिकाल ज्ञायकमूर्ति प्रभु पिता है। उसमें से निर्मल पर्याय निकलती है। तो कहते हैं... समझ में आया?

'**जलं फासू प्रवर्तंते**' देखो, ऐसा लिया। प्रासुक जल काम में लेते हैं। यह तो भाषा है। समझ में आया? प्रासुक जल परपदार्थ मैं ले सकता हूँ या छोड़ सकता हूँ या

पी सकता हूँ, ऐसा वस्तु में तीन काल, तीन लोक में नहीं है। अज्ञानी को भी नहीं है। परन्तु प्रासुक जल का विकल्प उठता है कि मुझे यह नहीं। तो उस विकल्प की अपेक्षा से प्रासुक जल लेते हैं, ऐसा व्यवहारनय का उपचार से कथन है। आहाहा! बहुत अन्तर। सेठी! अब यह आया। कल आया था न, भाई! **'जलं सुद्धं मनः सुद्धं च,'** **'जलं सुद्धं मनः सुद्धं च,'** यह भी व्यवहारनय का कथन है। जल परवस्तु है। ... यहाँ शुद्ध शब्द प्रयोग किया है, वह शुभ के अर्थ में प्रयोग किया है। पाठ शुद्ध है। **जल की शुद्धता से मन की शुद्धता होती है।** ऐसा पाठ लिया न? **'जलं सुद्धं मनः सुद्धं च,'** परन्तु इसका अर्थ दूसरा है कि जब ज्ञानी समकिती को अचेत निर्दोष प्रासुक पानी लेने का विकल्प है तो वह शुभराग है। तो पानी वहाँ अचेतन निमित्त है, तो उससे शुभभाव हुआ, ऐसा कहने में आता है। शुभभाव उससे होता नहीं। ओहोहो!

'अहिंसा दया निरूपनं।' देखो, **अहिंसा दया का पालन होता है।** राग की मन्दता में पर जीव को नहीं मारना, ऐसा भाव आया और जब शुद्ध जल प्रासुक का... उसके शुभभाव में दया पालने का भाव है तो वहाँ दया पालन की, ऐसा कहा जाता है। यह तो उसकी पर्याय से होती है, आत्मा की पर्याय उस शुभराग से होती नहीं। समझ में आया? उसमें लिखा है। **वास्तव में पुद्गल का सब जीवों का भावों का असर पुद्गल पर पड़ता है।** शीतलप्रसाद ने लिखा है। बात गलत है।

मुमुक्षु : अन्धकार।

पूज्य गुरुदेवश्री : अन्धकार वह कैसा अन्धकार! और यह सेठ कहे हमको कुछ खबर नहीं होती। जय नारायण! बस! आओ, पैसे ले जाओ, ऐसा करो। बात सच्ची है या नहीं? यहाँ चिह्न किये हैं, हों! उस समय देखकर। उस समय के चिह्न हैं।

वास्तव में पुद्गल का असर जीवों के भावों में... बिल्कुल झूठ है। **और जीवों के भावों का असर पुद्गल पर पड़ता है।** बिल्कुल झूठा—गलत है। महेन्द्रभाई! यह तो बात भाई! वीतराग मार्ग है। यह कोई साधारण प्राणी कायर अपनी दृष्टि से मनवाले, ऐसा मार्ग नहीं है। समझ में आया? और पश्चात् भी बहुत लिखा है। **जिसका असर सर्व शरीर पर पड़ता है।** देखो! बहुत लम्बा-लम्बा लिखा है। शुद्ध खान-पान करने से

उसमें रुधिर, वीर्य शुद्ध होता है। रुधिर, वीर्य शुद्ध होने से उपभोग के ऊपर भी असर पड़ता है। लम्बी-लम्बी बात। बहुत गड़बड़ कर डाली है। समझ में आया? एक द्रव्य की पर्याय दूसरे द्रव्य की पर्याय में असर तीन काल, तीन लोक में करती नहीं। अपनी पर्याय अपने से होती है, तब उस पदार्थ को निमित्त कहा जाता है। परन्तु यह बात कर्ताकर्म का अधिकार, उसमें आया नहीं न, इसलिए लोग समझते नहीं।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : सभी द्रव्य स्वतन्त्र हैं। क्या जल शुद्ध आया तो शुभभाव हुआ? बिल्कुल नहीं। अनन्त बार शुभ किया। द्रव्यलिंगी तो शास्त्र में अनन्त बार देखता था। 'मुनिव्रत धार अनन्त बार ग्रीवक उपजायो, पै निज आतम ज्ञान बिना सुख लेश न पायो।' अब इसमें क्या आया? जल शुद्ध लिया, आहार शुद्ध लिया, ४६ दोषरहित आहार लेता था। शुभभाव है। शुभभाव है, उसे निमित्त कहते हैं। तो शुभभाव से हुआ है? और शुभभाव से क्या धर्म होता है? समझ में आया?

मुमुक्षु : दुकान उठ जानेवाली है।

पूज्य गुरुदेवश्री : दुकान उठ जाने के लिये ही है यह। कहो, समझ में आया? ज्ञानसमुच्चय (सार) में आया न? कहो, कितनी गाथा अपने चलती है यह? ८ चलती है, ८ चलती है, लो। थोड़े-थोड़े दृष्टान्त देकर....

अब थोड़ी एक ५०९ लेते हैं थोड़ी।

गमं च अगमं दिस्टं, गमयं च अनंतनंत ससरूवं।
सुनियं च मुक्ति मग्गं, सुनिय च न्यान कम्म गलियं च ॥५०९॥

५०९ उपदेशशुद्धसार में। लो बराबर ९ का अंक आया और अपने यहाँ पूरा हुआ। तुम्हारे आठ व्याख्यान भी पूरे हो गये। क्या कहते हैं? **'गमं च अगमं दिस्टं'** भगवान आत्मा अगम्य है। मन, वचन, काया से न जानने योग्य आत्मा है। **'गमं दिस्टं'** ज्ञान द्वारा ज्ञात होता है। समझ में आया? **'गमयं च अनंतनंत ससरूवं।'** ओहो! यही आत्मा का अनन्त स्वभाव। अनन्त-अनन्तरूप अन्दर स्वभाव गुण शक्ति अनन्त है। एक समय में गुण अनन्त है। ज्ञान, दर्शन, चारित्र, स्वच्छत्व, विभुत्व, प्रमेयत्व, प्रकाशत्व

आदि अनन्त एक समय में शक्ति, हों! गुण अनन्त हैं। **ऐसा अनन्त स्वभाव अनुभव करनेयोग्य है।** और '**सुनियं च मुक्ति मग्गं,**' अब यहाँ सिद्धान्त है थोड़ा। मोक्ष के मार्ग को सुनना चाहिए। तुम्हारे अपने आप शास्त्र वाँचने से ख्याल नहीं आयेगा, ऐसा कहते हैं। समझ में आया? देरियाजी! 'गुरु बिना ज्ञान नहीं' आता है या नहीं? यह बाद में आता है। यहाँ तो बहुत आता है। पीछे है कहीं। 'गुरु बिना ज्ञान नहीं' यह पीछे है कहीं सब।

मुमुक्षु : ....

पूज्य गुरुदेवश्री : नहीं, ... समझ में आया?

अब क्या कहते हैं? मोक्ष के मार्ग को सुनना चाहिए। सुनने में क्या लिया? गुरुगम से सुनना चाहिए। अपनी कल्पना से शास्त्र वाँचे, उसे समझ में नहीं आता।

मुमुक्षु : मोक्षमार्ग की बात वाँचें, ऐसा नहीं?

पूज्य गुरुदेवश्री : वाँचे, ऐसा नहीं। '**सुनियं**' ऐसा कहा है। तुम्हारे दलाल है न! मोक्षमार्ग वाचनं नहीं। गुरु ज्ञानी के पास से मोक्षमार्ग सुनना। देखो, और '**सुनिय च न्यान कम्म गलियं च**' अब दो न्याय है कि सुनता है, तब तो विकल्प है। सुनता है न? तो विकल्प तो है। गणधर भी सुनते हैं। यह तो मोक्षमार्ग में है तो भी गणधर, भगवान की वाणी—दिव्यध्वनि सुनते हैं। विकल्प है। सुनने का राग आता है। वीतराग नहीं हुए न! वरना एक अन्तर्मुहूर्त में गणधरदेव चार ज्ञान, चौदह पूर्व की रचना का ज्ञान प्रगट करते हैं। वे ही गणधर, भगवान के पास अभी विराजते हैं। सीमन्धर भगवान के पास गणधर विराजते हैं। यहाँ गौतम विराजते थे। वहाँ दूसरे गणधर हैं भगवान के पास महाविदेहक्षेत्र में भगवान की वाणी सुनते हैं। सुनना वह विकल्प है, परन्तु पश्चात् अन्तर में अनुभव दृष्टि में विकल्प का अन्दर निषेध आता है। वह विकल्प मेरी चीज़ नहीं और मेरे स्वभाव में भी नहीं। देखो!

सुनकर के... 'न्यान सुनिय कम्म गलियं च' आत्मा के ज्ञानस्वभाव में लय होने से... देखो, दो बातें कीं। पहले सुनना। सुने बिना समझ में नहीं आता। अपनी कल्पना से शास्त्र वाँच ले और अर्थ करे। निश्चय-व्यवहार क्या है, उपादान-निमित्त क्या है,

स्व-पर क्या है, इसकी खबर बिना अर्थ करे तो कुछ का कुछ उल्टा हो जाये। वीतराग के मार्ग में भाव उल्टे हो जाते हैं। शब्द में अन्तर हो, उसकी कोई बात नहीं। समझ में आया? यह तो कुन्दकुन्दाचार्य कहते हैं न भाई! कि '**जदि दायेज्ज पमाणं चुक्केज्ज छलं ण घेत्तव्वं।**' मैं अनुभव की बात करता हूँ, उसमें ध्यान रखना। शब्दों में कोई फेरफार हो तो उसके ऊपर तुझे लक्ष्य नहीं करना। शब्द के जंजाल अनेक प्रकार से बात है। व्याकरण, संस्कृत, भूत, भविष्य काल, ऐसा बहुत आवे, उसमें कुछ अन्तर हो जाये तो तुझे उसका लक्ष्य नहीं करना। हमारा यथार्थ भाव क्या है, उसका तू लक्ष्य करके अनुभव करना। ऐसा पाँचवीं गाथा में आया है।

तो यहाँ कहते हैं कि '**सुनिय च न्यान**' दूसरी बात कि भगवान के पास या मुनि के निकट क्या सुना है? कि तेरे शुद्धस्वभाव सन्मुख मुड़। विकल्प आता है, होता है, व्यवहार है, परन्तु स्वभाव सन्मुख ढलने से ही तुझे सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्र होंगे। ऐसा मोक्षमार्ग सुना, ऐसा प्रगट करते हैं।

(**श्रोता :** प्रमाण वचन गुरुदेव!)